गान्धारी

कृष्णेश्वर डींगर



गान्धारी
(खण्ड काव्य)

गान्धारी

कृष्णेश्वर डींगर

उमेश प्रकाशन
१००, लूकरगंज, इलाहाबाद

Rs. 50.00

प्रकाशक : उमेश प्रकाशन, 100 लूकरगंज, इलाहाबाद – 01

संस्करण : प्रथम 2001

मुद्रक : केशव प्रकाशन, इलाहाबाद

लेसर कम्पोजिंग : अनुप्रवेश कम्पयूटर्स, लूकरगंज, इलाहाबाद

मूल्य : रुपये·पचास मात्र

नारी की अस्मिता को
समर्पित
जिसकी कल्पना मैंने
गान्धारी में की है

— कृष्णेश्वर डींगर

नवीन मानवीय संवेदना से सम्पृक्त खण्ड काव्य

श्री कृष्णेश्वर डींगर हिन्दी के वरिष्ठ कवि हैं। इनकी अनेक रचनाएँ प्रकाशित हो चुकी है। मुक्तक–रचना में सिद्धहस्त होने के बाद यदि कोई कवि प्रबंध रचना मे प्रवृत्त होता है तो उसकी सफलता की संभावना स्वतः सुदृढ हो जाती है। डींगर जी ने महाभारत के कथानक को लेकर 'गान्धारी' शीर्षक खंड काव्य प्रस्तुत किया है। महाभारत आदर्श और यथार्थ का ऐसा समग्र चित्र प्रस्तुत करता है कि उसके द्वारा भारतीय संस्कृति का वास्तविक स्वरूप साकार हो उठता है। महाभारत के पात्र व्यक्ति की अपेक्षा इतने अधिक मिथकीय हो गए हैं कि उनमें केवल एक युग का यथार्थ नहीं बल्कि अनेक युगों का यथार्थ व्यंजित होता है। 'गान्धारी' एक ऐसा विशिष्ट पात्र है जो अनेक भावात्मक संभावनाओं को अपने व्यक्तित्व में समाहित किए है। अन्धे पति की सच्चे अर्थ में सहधर्मिणी बनने की चेष्टा में जिसने अपनी आँख मे पट्टी बॉध लिया, दोनों ऑखो की पूर्ण ज्योति के रहते हुए भी अंधकार का वरण करना निश्चित ही बहुत बडी चुनौती है। शत पुत्रों की मॉ जिसने नैतिकता को चरम मूल्य के रूप में स्वीकार किया वह मोह ग्रस्त पति की महत्त्वाकाक्षा की बलि चढते हुए एक एक पुत्र को मृत्यु के मुख में समाता हुआ देखकर कैसी यातना पूर्ण मानसिकता से गुजरी होगी इसका अनुमान एक संवेदनशील कवि ही कर सकता है। 'गान्धारी' खंड काव्य में कवि ने गान्धारी को एक सम्वेदनशील पतिव्रता, पुत्रवत्सला नारी के रूप में अवतरित किया है। दासी गान्धारी का सौन्दर्य चित्रण करते हुए उसके ऑख के चित्रण को छोड देती है। इस पर धृतराष्ट्र एकदम से क्रोधित होकर उसे दड देने की धमकी दे देता है। कवि ने यहॉ धृतराष्ट्र के मनोविज्ञान को सही ढंग से पहचाना है। किसी व्यक्ति के पास जिस चीज का अभाव होता है वह

अपने प्रिय जन से उसकी पूर्ति करना चाहता है। धृतराष्ट्र का अपनी प्रियतमा के नयन–सौन्दर्य के प्रति घोर जिज्ञासा स्वाभाविक एवं मनोवैज्ञानिक होने के कारण अधिक आकर्षक है। धृतराष्ट्र के मन में उठने वाली अनेक आशंकाएँ एव दुविधाएँ इस चरित्र को मानवीय धरातल पर प्रतिष्ठित करती है।

'गान्धारी' मे यद्यपि गान्धारी के चरित्र को आलोकित किया गया है किन्तु संक्षेप मे महाभारत की मुख्य घटनाओ का भी काव्यात्मक प्रस्तुतीकरण हुआ है। 'गान्धारी' नारी की दृढ प्रतिज्ञा एवं पतिनिष्ठा की प्रतिमूर्ति है। उसके चरित्र मे भारतीय नारी का आदर्श मुखरित हो उठा है। कुन्ती में आदर्श और यथार्थ की द्वन्द्वात्मकता उसे आधुनिक नारी का सामीप्य प्रदान करती है।

प्रस्तुत खण्डकाव्य की भाषा सरल एवं प्रवाहपूर्ण है।

प्राचीन कथानक को नवीन मानवीय संवेदना से सम्पृक्त करके कवि ने इस खंडकाव्य को रोचक एवं आकर्षक बनाया है। यह काव्य पठनीय एव सग्रहणीय है। अन्त मे मैं इस काव्य के प्रणेता डींगर जी को साधुवाद देता हूँ।

डॉ रामकिशोर शर्मा
रीडर हिन्दी विभाग
इलाहाबाद विश्वविद्यालय इलाहाबाद

गान्धारी खण्डकाव्य, एक दृष्टि

वरिष्ठ कवि एवं चिन्तक श्री कृष्णेश्वर डीगर द्वारा रचित गान्धारी खण्डकाव्य पढने का सुअवसर मिला। वर्तमान समय में पौराणिक आख्यानों को लेकर नयी दृष्टि देना एक साहसपूर्ण काम है क्योंकि आज का व्यवसायिक बौद्धिक युग भौतिक उपलब्धियों की चकाचौध में पड़कर आदर्श को भुला चुका है। किन्तु एक सजग साहित्यकार इन्हीं आख्यानों से आदर्श की भूमि बनाकर भविष्य को सचेष्ट करता है।

कवि ने महाभारत से गान्धारी के चरित्र को बड़ी सजगता से उठाया है और एक तरह से महाभारत की भूमिका में उसे विशेष महत्त्व का पात्र बनाया है। इस काव्य में पाण्डुवंश की उत्पत्ति, पारस्परिक वैमनस्य, द्यूत, युद्ध एवं उपसहार सभी पाठक की दृष्टि मे आ जाते हैं।

"पृष्ठभूमि, असंगत परिणय, दृढ प्रतिज्ञनारी, प्रतिशोध, कालचक्र, आशीर्वचन, विभीषिका विस्फोट और अवसान", सर्गो में विभक्त यह काव्य सम्पूर्ण रूप से गान्धारी की उपस्थिति से सम्पृक्त है। 'असंगत परिणय' शीर्षक मे कवि ने गान्धारी के परिणय को एक विवेकपूर्ण बलिदान के रूप में दर्शाते हुए नारी की निरीहता एवं विवेक दोनों को उद्‌घाटित किया है। निरीहता इसलिए कि नारी अब भी विवाह संबंधों को न चाहते हुए स्वीकारती है और विवेक इसलिए की गान्धारी ने दो राज्यों के बीच होने वाले युद्ध को टालने के लिए परिणय स्वीकार किया और पति के साहचर्य, पातिव्रत हेतु आँखों पर पट्टी बॉध कर" अन्धे पति धृष्तराष्ट्र की सहधर्मिणी बनी। ऑखों पर पट्टी बाँधने से अन्धो का अनुकरण करने पर भी उसकी अन्तर्दृष्टि खुली थी और प्रज्ञा जागृत थी। पुत्र–मोह और राजमद मे डूबी हुई धृतराष्ट्र की बुद्धि को निरंतर झकझोरती रही और अंधकारपूर्ण भविष्य की ओर इंगित करती रही किन्तु धृतराष्ट्र सर्वान्ध ही रहे। युद्ध की विभीषिका और परिणाम

को जानते हुए भी गान्धारी ने अपने पुत्र दुर्योधन को आशीष नही दिया क्योकि वह अधर्म युद्ध की ओर था– कवि की पक्तियॉ उद्‌धृत हैं–

"दुर्योधन अपनी माता से/लेने आशीर्वाद गया/युद्ध से पहले जिससे/विजय उसे मिल जाये/गान्धारी ने दिया नही पर/उसको विजयाशीष/बोली "वही विजय पाता है/जो निज धर्म निभाये/अब भी समय शेष है बेटा/यह अधर्म का युद्ध/इसे रोक दे वरना नर/सहार अकारण होगा।"

गान्धारी का चरित्र परिणय से लेकर प्राणान्त तक बडा प्रेरक और मर्मस्पर्शी है। कवि ने गान्धारी का चरित्र उठाकर नारीभावना की उदात्तता को उकेरा है यह सन्देश भी दिया है कि भारत की नारी अपनी संस्कृति की संरक्षिका के साथ साथ प्रज्ञावती भी है किन्तु अविवेकी पुरुष की परछाई से वह आक्रान्त है। वह भगवान कृष्ण से प्रश्न करती है, क्रोध में शाप भी देती है किन्तु क्षणभर में प्रकृतिस्थ होने पर पश्चात्ताप भी करती है।

सम्पूर्ण कथानक में पौराणिकता के साथ साथ वर्तमान की धड़कन भी है क्योंकि आज के राजनायक भी कहीं पुत्र मोह मे तो कहीं राजमद में धृतराष्ट्र से है। प्रज्ञावती नारी उन्हें आदर्श की ओर ले जा सकती है जिसकी उपेक्षा अहितकर है। ऐसे सुन्दर प्रसंग और पात्र को सजीवता प्रदान करने के लिए कवि को साधुवाद।

214/180 ए, नागवासुकि,
दारागंज, इलाहाबाद

– राजाराम शुक्ल

अपनी बात

रामायण और महाभारत हमारे ऐसे आर्ष ग्रन्थ है जो आज भी हमारा दिशा–बोध कराते है। उनमे अध्यात्म, धर्म, साहित्य, संस्कृति इतिहास और राजनीति जैसी अनगिनत धरोहरें सुरक्षित हैं जिन्होंने हमारी अस्मिता को अक्षुण्ण बनाए रखा है और जिनके बिना भारतीयता की पहचान असम्भव है। इनमें समाहित पारम्परिक चेतना की अन्त· सलिला अनवरत प्रवहमान है। यही कारण है इनके पात्रो पर ही इतना साहित्य रचा गया और रचा जा रहा है, सम्भवतया विश्व के किसी ग्रन्थ के पात्रों पर इतना चिन्तन नही हुआ है।

महाभारत मे गान्धारी एक अद्भुत पात्र है। यदि उन्हे केवल एक पतिव्रता नारी के रूप में प्रतिष्ठापित करके छोड दिया जाय तो बदली हुई आधुनिक सामाजिक संरचना और नयी दृष्टि की संवेदना से मेल खाना कठिन हो जाएगा। आखो की पट्टी के पीछे छिपी हुई पीडा पर भी दृष्टि डालना आवश्यक है। वह एक ऐसी पतिव्रता नारी है जिसका पति पुत्र–मोह तथा राज्य लिप्सा से ग्रसित है। वह अपने सौ पुत्रों को युद्ध में बलिदान कर देती है, उसकी मन्त्रणा को उसका अविवेकी पति बार बार अस्वीकार कर देता है। ऐसे अनेक बिन्दु हैं जिनको इस खण्ड–काव्य में मैंने उठाया है तथा गान्धारी का मनोविश्लेषण करने का प्रयास किया है। इसमें कहां तक सफलता मिली है यह तो पाठक ही बता सकेंगे। मैने कथा की पौराणिकता का पूर्णरूपेण निर्वाह करने का प्रयास किया है।

अनेक वर्ष पूर्व मैने उपरोक्त संदर्भो मे एक कविता लिखी थी जिसकी अन्तिम पक्तियॉ प्रस्तुत हैं। इस खण्ड काव्य मे इसी कविता को पूर्णता प्रदान की गयी है :–

गान्धारी ! तुम्हारी आखों की पट्टी
अब तक कोई न खोल पाया
उसके पीछे की पीड़ा
अब तक कोई न देख पाया
किन्तु धन्य है तुम्हारा विश्वास
आंखों पर पट्टी बांध कर भी
तुमने रचा एक नया इतिहास।

कविता मे छन्द मेरे विचार से साधन होता है साध्य नहीं। फिर भी मैंने इस खण्ड काव्य की रचना छन्दों में ही की है। मैंने दो, तीन प्रकार के छन्दों का प्रयोग किया है। हां ! अर्थ की दृष्टि से पंक्तियों को छोटी बड़ी कर दिया है। किन्तु पूरी पंक्ति, में मात्राओं को समान रखने का प्रयास किया है।

प्रयाग के साहित्यकार तथा कवियों के द्वारा जो सम्मान तथा स्नेह मुझे प्राप्त हुआ है, मै इस हेतु उनका हृदय से आभारी हूॅ। यदि उनकी गिनती करूं तो एक पूरी सूची बन जाएगी। भारत भारती से विभूषित विख्यात कवि व साहित्यकार डा॰ जगदीश गुप्त तथा अनुगीत के प्रवर्तक, विद्वान कवि व साहित्यकार डा॰ मोहन अवस्थी की कृपा दृष्टि मुझ पर सदा रही है। मैं उन्हे अपने प्रणाम निवेदित करता हूॅ। मै उन वरिष्ठ साहित्यकारों तथा कवि मित्रों का भी नाम अवश्य लेना चाहूॅगा जिन्होंने इस खण्ड काव्य की पाण्डुलिपि पढकर या इसके अंश सुनकर मुझे प्रोत्साहित किया। वे साहित्यकार है डॉ॰ तिलक राज गोस्वामी, श्री सुरेन्द्र नाथ नूतन, डॉ॰ राजाराम शुक्ल, डॉ॰ रामकिशोर शर्मा, डॉ॰ सुरेश व्रत राय तथा श्री दयाशंकर पाण्डेय। डॉ॰ रामकिशोर शर्मा तथा डॉ॰ राजा राम शुक्ल ने तो अपने विचार भी लिखने की कृपा की है। मै उनके प्रति अपना हार्दिक आभार प्रकट करता हूॅ।

सुपरिचित गीतकार समीक्षक तथा कानपुर विश्वविद्यालय के एमेरिटस प्रोफेसर डा॰ उपेन्द्र की पुस्तक 'महाभारत चरित चर्चा' पढने का सौभाग्य प्राप्त हुआ। यद्यपि यह पुस्तक 'गान्धारी'

लिखने के बाद मिली थी फिर भी इस पुस्तक से जो महाभारत सम्बन्धी ज्ञान वर्धन हुआ उसके लिए मैं उनका आभारी हूँ। मेरे सुविज्ञ मित्र श्री राम लखन अग्रवाल ने भी अपने सुझावों से मुझे उपकृत किया है।

मेरी पत्नी श्रीमती संतोष स्वयं साहित्य की प्राध्यापिका रही हैं तथा प्रायः मेरी रचनाओं की प्रथम श्रोता रहती है। उनके सुझाव तथा घर पर साहित्यिक वातावरण बनाए रखने के सहयोग के कारण मैं उनके प्रति आभार प्रकट करता हूँ।

अपने सुधी विज्ञ पाठकों के सुझाव और प्रतिक्रियाओ का मैं स्वागत करूँगा।

कृष्णेश्वर डीगर

(अन्तर्राष्ट्रीय महिला सशक्तीकरण वर्ष)
चैत्रशुक्ल अष्टमी
दिनांक 1 अप्रैल 2001

1450 किदवई नगर
भरद्वाजपुरम् (अल्लापुर)
इलाहाबाद – 211006
फोन नं॰ – 501538

अनुक्रम

सर्ग		अध्याय		पृष्ठ
एक	–	पृष्ठभूमि	...	15
दो	–	असगत परिणय	...	20
तीन	–	दृढ प्रतिज्ञ नारी	...	26
चार	–	प्रतिशोध	...	29
पाच	–	कालचक्र	...	31
छ.	–	आशीर्वचन	...	38
सात	–	विभीषिका	...	42
आठ	–	विस्फोट	...	45
नौ	–	अवसान	...	53

पृष्ठभूमि

ज्योंही दृष्टि पड़ी शान्तनु की सत्यवती पर
उसी दृष्टि ने एक विशद इतिहास लिख दिया
नृप का वह आखेट बना आखेट काल का
महाकाल को महानाश का वास दिख गया।

सत्यवती का धर्मपिता यद्यपि निषाद था
नही पुस्तको का उसने अध्ययन किया था
किन्तु डूबती नौकाओं को बीच भंवर से
युक्ति लगाकर सदा नदी के पार किया था।

शकुन्तला–दुष्यन्त कथा को सुन रखा था
उसे ज्ञात थी राजाओं की प्रेम कथाएं
शर्त रखी उसने यह, तब होगा विवाह यदि
सत्यवती के पुत्र राज्य की गद्‌दी पाएं।

शान्तनु हुए हताश विरह की अग्नि जलाए
नतमुख अपने राजभवन को वापस आए
गंगा–पुत्र देवव्रत को जब ज्ञात हुआ यह
त्वरित पिता के पास भागते दौडे आए।

बोले "इसमे कुछ चिन्ता की बात नही है
नहीं करूंगा मैं विवाह जीवन भर अपना
सत्यवती के ज्येष्ठ पुत्र को राज्य मिलेगा
सच हो जाएगा निषाद का सारा सपना"।

× × × × ×

राज्य की कलह को
मिटाने हेतु व्रत लिया
तब से ही देवव्रत
भीष्म कहलाने लगे
शान्तनु पिता से
इच्छा–मृत्यु बरदान मिला
युद्ध भूमि मध्य
निज शौर्य दिखलाने लगे।
चित्रागद विचित्र वीर्य
सत्यवती के दो पुत्र
शिक्षा शस्त्र–शास्त्रों की
भीष्म से पाने लगे
शान्तनु की मृत्यु बाद
चित्रांगद राजा बने
विजय श्री पाकर
अधिक इतराने लगे।

× × × × ×

हस्तिनापुर के नए सम्राट
चित्रांगद हुए जब
एक था गन्धर्व उसका
नाम भी चित्रांगद था
हो गया आहत अहं सम्राट का
यह बात सुन कर
युद्ध का निर्णय लिया
यद्यपि विजय पाना कठिन था।

जब कभी उपलब्धि मिल जाती
किसी को है अचानक
विकृत होती बुद्धि होता
नाश उसका सदा निश्चित
हस्तिनापुर के नृपति अब
हो गए उससे पराजित
आ गया उनके निधन से
राज्य पर अब नया संकट।

× × × × ×

राजा हुए विचित्र वीर्य
पर वह थे परम विलासी
सत्यवती को अब उनके
परिणय की चिन्ता जागी
काशीनृप की कन्याएं
अम्बिका और अम्बालिका
उनसे परिणय किया किन्तु
वे भी हो गई अभागी।

किया अत्यधिक भोग
असंयम ने उनको डस डाला
राज्यक्ष्मा से पीड़ित थे
उपचार हो गए निष्फल
असमय निधन हुआ उनका
वह जिये सात ही वर्ष
कौन बने युवराज सभी को
चिन्ता रहती प्रतिपल।

व्रती भीष्म का भीषण व्रत
अब टूट नही सकता था
ऐसी जटिल समस्या का हल
कोई ढूढ न पाया
सत्यवती ने पुत्र व्यास को
बुलवाया फिर बोली
"वत्स ! इन्हें दो पुत्र
इसीसे तुमको है बुलवाया"।

किसी भांति स्वीकार व्यास का
तेज किया दोनों ने
किया अम्बिका ने लज्जा से
अपनी आंखें बन्द
जन्म हुआ जिस शिशु का
वह धृतराष्ट्र बहुत बलशाली
किन्तु मातृ लज्जा के कारण
पुत्र हुआ जन्मान्ध।

अम्बालिका देख कर
द्वैपायन का कृष्ण शरीर
भय से पीली पड़ी अतः
जब जन्म पाण्डु ने पाया
भयाक्रान्त माता के कारण
पाण्डु वर्ण का वह था
इसीलिए वह शिशु जन्मा
तब पाण्डु नाम कहलाया।

दोष युक्त थे दोनों शिशु
थी सत्यवती अब चिन्तित
किन्तु व्यास तक जाने को
अम्बालिका न थी तैयार
भेज दिया दासी को उसने
द्वैपायन के पास
जन्म विदुर का हुआ
हुए जो ज्ञानी परम उदार।

दिया भीष्म ने शिक्षा
तीनों को शस्त्रो–शास्त्रो मे
अन्धे थे धृतराष्ट्र
किन्तु निकले असीम बलशाली
तन के क्षीण वर्ण के पीले
पाण्डु बने धनुधारी
दासी पुत्र विदुर ने उनसे
नैतिक शिक्षा पाली।

राज्य पाण्डु को मिला
और धृतराष्ट्र हो गए वंचित
अन्धेपन के कारण
उनका बल न काम कुछ आया
द्वेष और कुण्ठा को जीवन भर
वह रहे संजोए
नृप बनने का स्वप्न
न. उनका कभी पूर्ण हो पाया।

असंगत परिणय

सत्यवती ने कहा भीष्म से
“बडे हुए धृतराष्ट्र
उनका परिणय करने की
अब चिन्ता मुझे सताती
मुझे मिलेगी शान्ति
जिसे तुम ही अंब दे पाओगे
मेरे मरने के पहले
यदि पौत्र बधू आ जाती।”

“अन्धा है धृतराष्ट्र
मगर मुझ में इतनी क्षमता है
शीघ्र तुम्हारे पौत्र हेतु
सुन्दर पत्नी लाऊंगा
मुझ को दो आशीर्वाद
फिर ‘देखो मेरा पौरुष’
कहा भीष्म ने, “कल ही मै
गान्धार देश जाऊंगा।”

भीष्म गए गान्धार देश
लेकर अपना दृढ निश्चय
नृपति सुबलं से कहा कि
“मैं लाया विवाह प्रस्ताव
मुझे चाहिए गान्धारी
धृतराष्ट्र के लिए शीघ्र
यद्यपि वह है अन्ध
किन्तु उसका है वीर स्वभाव।

यह सम्बन्ध हस्तिनापुर का
सुख समृद्धि लाएगा
छोटे से गान्धार देश का
होगा परम विकास
गान्धारी भी महिषी बनकर
सुख समृद्धि भोगेगी
वरना मेरे पौरूष का तो
है तुमको आभास"।

पुत्र शकुनि ने सुना
भीष्म का यह प्रस्ताव असंगत
हुआ क्रोध से लाल
कहा "यह कभी नही हो सकता
अन्ध युवक के हेतु
न मैं अपनी भगिनी को दूंगा।
यदि होता है युद्ध उसे भी
मैं सहर्ष सह सकता"।

पता चला जब गान्धारी को
उसने मन में सोचा
वैर हस्तिनापुर का
देगा महानाश अनिवार्य
कहा पिता से, भ्रात शकुनि से
करो न अब तुम चिन्ता
यह विवाह प्रस्ताव मुझे भी
है सहर्ष स्वीकार्य।

आखों पर पट्टी बांधूंगी
सदा रहूगी अन्धी
पतिव्रत धर्म निभाकर
जो भी होगा वही सहूंगी
अन्तस् की आंखो को
फिर भी बन्द नहीं रखूगी
दोनों देशो की प्रभुता पर
आंच न आने दूंगी।

सुबल शकुनि दोनो
हतप्रभ थे उसके इस निर्णय पर
किन्तु हस्तिनापुर से लेना वैर
बहुत दुस्तर था
राजनीति की इस विसात पर
हारे हुए जुआरी
शकुनि के लिए अब
भविष्य में एक नया अवसर था।

× × × × ×

महाबली धृतराष्ट्र ने सुना
जब अपनी माता से
गान्धारी से उनका परिणय
होना है अब निश्चित
एक चतुर दासी से बोले
"यदि उसको देखा है
उसका रंग रूप बतलाकर
मन कर दो आह्लादित।

कैसा उसका रंग रूप है
कैसी उसकी चितवन
कैसे उसके हाव भाव हैं
शीघ्र मुझे बतलाओ
उसके नक्श नयन का विस्तृत
वर्णन मुझे सुनाकर
जो भी पुरस्कार चाहो
वह तुम मुझसे ले जाओ"
दासी बोली "प्रभुवर !
मैंने गान्धारी को देखा
गौरवर्ण ऐसा कि चन्द्रिका
लख कर उसे लजाए
परम सुन्दरी चन्द्र मुखी है
मैं कैसे बतलाऊं
तन्वंगी ऐसी कि बल्लरी
बार बार झुक जाए।

वाग्माधुरी उसकी सुन कर
कोकिल शरमा जाए"
तब बोले धृतराष्ट्र कि "होगी
मृग नयनी से बढकर
नक्श नयन कैसे हैं उसके
मुझको शीघ्र बताओ" ?
दासी चुप हो गई अचानक
उनके इन प्रश्नों पर।

"नहीं बोलती दासी क्या
तू नहीं जानती मुझ को
कौन कर रहा प्रश्न
कि जिसके भृकुटि मात्र कम्पन से
कौन बचा सकता है
तुझ को कुछ भी ज्ञात नही है
मुक्त अभी तू हो जाएगी
क्षण भर में जीवन से"।
कांप रही थी दासी थर थर
फिर भी बोली "प्रभुवर !
गान्धारी के नेत्र नही
अब तक मैं देख सकी हूं
बंधी हुई है पट्टी उनपर
अन्दर नेत्र छिपे हैं
इसीलिए उनका वर्णन
मै अब तक कर न सकी हूं।"
चीख पड़े धृतराष्ट्र
"दूर हट दासी तू है पागल
बांध आंख पर पट्टी क्या
कोई निज व्याह रचाता"
फिर सोचा यह भी सम्भव
क्या अन्धी है गान्धारी
जाने क्यों मुझ अन्धे को
दुर्भाग्य सदा ठग जाता।

पता भीष्म को चला कि
थे धृतराष्ट्र दुखी मन इससे
गए.स्वयं फिर बोले "वत्स !
न तुम अब करना चिन्ता
पतिव्रत धर्म निभाएगी वह
रोग दोष निज पति का
झेलेगी अन्धी बन कर
गान्धार देश की दुहिता।

मूक हुए धृतराष्ट्र
सोचने लगे कि यह भी सम्भव
किसी बात की प्रतिक्रिया से
यह बलिदान किया है
वैवाहिक उत्साह पड गया
उनका सारा ठंडा
व्यग्र हो गए मिलन हेतु
पूछें "क्या ठान लिया है"।

दृढ़ प्रतिज्ञ नारी

प्रणय सूत्र मे बधे शीघ्र ही
रात्रि मिलन की आयी
बोले तब धृतराष्ट्र "तुम्हें पाकर
मैं धन्य हुआ हूं
किन्तु न जाने क्यों तुमने
आंखों पर पट्टी बांधी
मेरी क्यों चिन्ता करती
मैं तो जन्मान्ध रहा हूं।

प्रिये! मुझे तो ऐसा लगता
यह संकल्प तुम्हारा
किसी विवशता के विरोध में
अप्रकट दमित प्रदर्शन
पतिव्रता का धर्म निभाकर
तुम तो दे सकती थीं
पग पग पर मुझ को संभालकर
मेरे खोये लोचन"।

गान्धारी बोली "मत खींचों
मुझे नरक की ओर
मुझे निभाने दो स्वामी !
अपने पतिव्रत का धर्म
आनेवाली आर्यों की
ललनांए शिक्षा लेंगी
त्याग तपस्या ही तो
होता है नारी का कर्म।

यह विरोध का मूक प्रदर्शन
तुम मुझ से कहते हो
इसको सत्याग्रह कह कर
मुझ को पीडित करते हो
किन्तु किसी अनछुई कली के
मन की भाव-प्रवणता
क्या तुमने अनुभूत किया
लाछन केवल धरते हो।

राजनीति के यज्ञ कुण्ड में
नारी की आहुति को
उसे नही मैं पीडा कहती
फिर वह नयी नहीं है
बीच स्वयंवर से ललनाएं
शौर्यशक्ति के बल पर
अपहृत करना राजवंश की ही
तो रीति रही है।

तुम कहते हो आंखों पर
बांधी है मैंने पट्टी
इसीलिए अन्धी बनकर
मैं सेवा कर न सकूंगी
तब तो मैं यह प्रण करती हूं
जितने तुम चाहोगे
उतने पुत्रों और पुत्रियों की
मैं जननि बनूंगी।

मन की आंखें खुली रहेंगी
इतना निश्चय मेरा
पग पग पर तुमको संभालकर
अपनी सम्मति दूंगी
यह विकल्प होगा इसको
तुम मानो या ठुकराओ
आर्यपुत्र ! मैं अपने प्रण से
किंचिंत नहीं हटूंगी"।

गान्धारी के तर्कों पर
हो गये मूक धृतराष्ट्र
अन्तस् में अब देख रहे थे
वह तेजस्वी काया
जिसके कारण अब न बचा था
प्रथम मिलन उत्साह
सोच रहे थे इसको मैंने
खोया है या पाया।

प्रतिशोध

चल पडा था पाण्डु का
स्वर्णिम समय मे अब विजय रथ
उन्होंने श्रीकृष्ण की
कुन्ती बुआ से किया परिणय
राज्य के विस्तार के हित
राजकन्या माद्री से
किया परिणय, राजनीतिक कामना
जब बढ़ी अतिशय।

थक चुके थे पाण्डु
पूरी हो चुकी थी विजय–यात्रा
मिल सके जिससे कि अब
कुछ शान्ति उनके क्लान्त मन को
कुछ अवधि के वास्ते
धृतराष्ट्र को राजा बनाकर
साथ कुन्ती माद्री को
ले गए वह शाल वन को।

हस्तिनापुर के हुए सम्राट
अब धृतराष्ट्र कुछ दिन
शकुनि को अवसर मिला
अपमान का बदला चुकाए
आ गया वह हस्तिनापुर
कर लिया निश्चय कि अब
प्रतिशोध लेकर धूर्तता से
सभी को नीचा दिखाए।

हुआ जब यह ज्ञात
गान्धारी हुई अत्यन्त विचलित
पिता के अपमान की
ज्वाला हृदय में जल रही थी
किन्तु हो अपमान पति का
यह नही उसको सहन था
हस्तिनापुर के सुयश की
कामना सबसे बडी थी।

वह नहीं यह चाहती थी
बांध ले पट्टी कि ऐसी
हस्तिनापुर राज्य सारा
गर्त में गिर जाए इससे
कहा भ्राता शकुनि से उसने
करो मत काम ऐसा
लोग रखें पत्नियों के
भाइयों को दूर जिससे।

× × × × ×

पर शकुनि था धूर्त उसको
बात भगिनी की न भायी
धूर्तता की युक्तियां
पग पग सदा उसने चलायी।

काल चक्र

उधर पाण्डु पत्नी कुन्ती को
दुर्वासा का मन्त्र मिला था
अंश प्राप्त कर धर्म राज का
पुत्र युधिष्ठिर जन्मा
वायु अंश से भीम हुए तब
देवराज से अर्जुन
दुखी हुई माद्री यह लखकर
मैं न हुई अब तक मां।

माद्री ने भी उसी मन्त्र का
किया भक्ति से जाप
ध्यान किया अश्विनी सुतों का
जिससे मां बन जाए
नकुल और सहदेव हुए तब
दोनों जुड़वा पुत्र
यह पांचों शिशु ही आगे
चलकर पाण्डव कहलाए।

सौ पुत्रों की मां बनने की
गान्धारी की इच्छा
शंकर का वरदान मिला
पर पूर्ण न हो पायी थी
बन में उधर युधिष्ठिर जन्मे
'गया हाथ से राज्य' –
पति की चिन्ता यही सोचकर
·तन मन मे छायी थी।

गर्भवती वह हुयी किन्तु
फिर भी न प्रसव हो पाया
कहा व्यास ने 'मत घबराओ
पूरी होगी इच्छा"
किन्तु हताशा में उसने
उदरोपरि मारे घूंसे
मांस पिण्ड निकला
उंसमें था नहीं एक भी बच्चा।

किन्तु व्यास ने कुछ प्रयोग कर
सौ खण्डों में बांटा
धीरे धीरे पुत्र हुए शत
और बालिका एक
ज्येष्ठ पुत्र दुर्योधन जन्मा
हुए अपशकुन भारी
तदनन्तर दुःशासन, दुस्सह
दुश्शल आदि अनेक।

गान्धारी ने पूर्ण किया व्रत
सौ पुत्रों को जन्मा
पुत्र सभी थे शूर वीर
पर थे स्वभाव के द्रोही
दुर्योधन जब बड़ा हुआ
युवराज न बन पाने से
सम्बल पाकर अन्ध पिता का
बना परम विद्रोही।

सत्यवती ने कहा व्यास से
अब तुम बन को जाओ
उधर हो गया निधन शाल बन मे
जब पाण्डु नृपति का
गयी साथ में पुत्र बधूएं
नहीं लौट कर आयीं
माद्री भी तब सती हो गई
दिया साथ निजपति का।

पता भीष्म को चला
द्रोण थे अस्त्र–शस्त्र के ज्ञाता
आदर से लाकर कुल का
आचार्य उन्हे बनवाया
पाच पाण्डवो और सभी
धृतराष्ट्र सुतो को उनसे
अस्त्र शस्त्र विद्या पाने को
आश्रम में भिजवाया।
द्रोणाचार्य परम ज्ञानी थे
उनसे शिक्षा पाकर
हुए युधिष्ठिर धर्म धुरंधर
भीम. शक्ति के भूधर
अर्जुन युग के परम धनुर्धर
उनसा वीर न कोई
नकुल और सहदेव सहित
पाण्डव वीरों के नाहर।

× × × ×. ×

शकुनि कर रहा था प्रपंच
नित दुर्योधन को लेकर
राज्य और सत्ता के खातिर
शीत युद्ध था जारी
पुत्र मोह में डूबे थे धृतराष्ट्र
मगर वह चुप थे
मन ही मन वह कहते थे
दुर्योधन ही अधिकारी।
. वारणावत में दुर्योधन ने
लाक्षागृह बनवाया
पांचपाण्डवों औ कुन्ती को
उस घर में भिजवाया
मध्य रात्रि में आग लगाने पर
भी वह बच निकले
किन्तु विदुर ने की सहायता
वह भी समझ न पाया।

पाच पाण्डवों की पत्नी
इस बीच हुयी पांचाली
लौटे सभी हस्तिनापुर
दुर्योधन को न भाया
खाण्डव वन दे दिया उन्हें
जो पूर्णतया जंगल था
जिसे उन्होंने इन्द्रप्रस्थ का
सुन्दर नगर बनाया।

× × × × ×

शकुनि दुर्योधनादिक ने इस तरह चक्कर चलाया
युधिष्ठिर को धूर्तता से, द्यूत क्रीडा मे हराया।

जब उन्होने द्रोपदी को दाव पर बरवस लगाया
नग्न होती द्रोपदी की, कृष्ण ने लज्जा बचाया।

पाण्डवों ने शर्त के अनुसार अब बनवास पाया
कौरवो ने राज्य पाने के लिए कांटा हटाया

× × × × ×

गान्धारी बोली निज पति से
"छोडो पंथ कुमति का
तुम कर रहे मोह में फंसकर
अपना ही उपहास"
उत्तर में धृतराष्ट्र ने कहा
"यह तो न्यायोचित है
शर्त मान कर ही पाया है
उन सबने बनबास"।

गान्धारी ने कहा "दमित इच्छा
के तुम हो दास
पुत्र हमारा दुर्योधन ही
मोहरा बना तुम्हारा
राज्य प्राप्त करने की
इच्छा ने तुमको भरमाया
किन्तु न भूलो उन्हें
कृष्ण का पूरा मिला सहारा।

अब तक मैं चुप थी पर
यह सब सहना बहुत कठिन है
आखों पर पट्टी है मेरे .
प्रज्ञा किन्तु सबल है
द्रुपद सुता के ताप
लाक्षागृह की तीव्र लपट से
मेरा अन्तस् सदा सुलगता
ही रहता हर पल है।

राष्ट्र होता निजी स्वार्थो से बृहत्तर
राष्ट्र में होता प्रजा का योग गुरुतर
राष्ट्र हित है राज्य सुख से सदा बढकर·
छोड दो सुत मोह मेरी प्रार्थना पर"।
क्रोध से धृतराष्ट्र बोले तमतमाकर,
"मत बघारो राष्ट्र का तुम ज्ञान
राज्य सत्ता के अलग ही नियम होते
मत करो निज ज्ञान पर अभिमान।

स्त्रियो से राज्य चल सकता नहीं है
राज्य सत्ता दण्ड की अनुगामिनी है
पुत्र दुर्योधन हमारा पूर्ण सक्षम
उसी के पुरुषार्थ की वह कामिनी है।

पाण्डवों के प्रति प्रजा का मोह अस्थिर
प्रजा केवल दण्ड का भय जानती है
युद्ध हो तो कौरवों की जीत निश्चित
विजय श्री बलवान को पहचानती है"।

× × × × ×

गान्धारी विफर कर बोली कि "छोड़ो मोहसुत का
पुत्र यह मेरा इसे पहचानती हू
शकुनि यद्यपि भ्रात मेरा किन्तु उसकी
मन्त्रणा का कुफल भी मै जानती हूं"।

दुखीमन धृतराष्ट्र बोले "मांग लो सब
पर कहो मत पुत्र का अधिकार त्यागूं
मांग लो यदि मांगती हो प्राण मेरे
नर्क में जाऊं अगर प्रण त्याग भागूं"।

"आंख की अंधी नहीं हूं" गान्धारी ने कहा तब
आंख पर पट्टी नहीं अंधा बनाती
यदि नहीं तुम बात मेरी मानते हो
मैं अभागिन दुखी मन निज भवन जाती"

× × × × ×

हो गया अज्ञात वास समाप्त
पाण्डव लौट आए
कौरवों ने सुई भर भी भूमि
देना किया अस्वीकार
कृष्ण आए सन्धि का
प्रस्ताव लेकर कौरवों तक
किन्तु असफ़लता मिली
वह हो गए लाचार।

× × × × ×

हो गया था कौरवों और पाण्डवों में युद्ध अब अनिवार्य
एक युग का अन्त ही था नियति को स्वीकार्य

आशीर्वचन

दुर्योधन अपनी माता से
लेने आशीर्वाद
गया युद्ध से पहले जिससे
विजय उसे मिल जाये
गान्धारी ने दिया नहीं पर
उसको विजयाशीष
बोली "वही विजय पाता है
जो निज धर्म निभाये।
अब भी समय शेष है बेटा !
यह अधर्म का युद्ध
इसे रोक दे वरना नर —
संहार अकारण होगा
मैं तेरी जननी हूं मुझको
मत तू गलत समझना
वही कह रही हू मैं जिससे
हित तेरा ही होगा।"

दुर्योधन ने कहा कि "मुझको
सब समझेंगे कायर
मेरी मान प्रतिष्ठा सब
मिट्टी में मिल जाएगी
अट्ठारह अक्षौहिणी सेना
जो तैयार खड़ी है
माता ! मेरी कायरता को
सहन न कर पाएगी।

तुम्हें न जाने क्यों मुझ पर
विश्वास नही होता है
मातृस्नेह के कारण शायद
तुम ऐसा कहती हो
होगी विजय हमारी इसमे
मत सन्देह करो तुम
क्षत्राणी को विजय–प्रेरणा
ही शोभा देती है।

मामा शकुनि तुम्हारे भ्राता
ने ही सत्य कहा था
आशीर्वाद नही पाओगे
तुम माता से अपनी
लगता है उनका कहना ही
ठीक हुआ है सचमुच
तुमको स्नेह पाण्डवों से है
यद्यपि मेरी जननी।"

गान्धारी बोली "बेटा !
है धर्म युद्ध श्रेयस्कर
देश राष्ट्र के हित की रक्षा
क्षत्रिय धर्म कहाता
केवल स्वार्थ राज्य की लिप्सा
नहीं देश के हित में
इनके कारण पापी होता
जो भी रक्त बहाता।

भीष्म पितामह गुरुवर
द्रोणाचार्य आदि जो गुरुजन
देगे तेरा साथ युद्ध मे
अब संदेह नहीं है
खाया नमक हस्तिनापुर का
साथ तुम्हारा देंगे
किन्तु पाण्डवों के प्रति
उनका भी कम स्नेह नही है।

आज हस्तिनापुर में जो
अन्याय अनीति बढी है
आंखों की पट्टी के नीचे
मैंने सब कुछ देखी
मैं भविष्य में अधकार के
बादल देख रही हूं
तुम्हीं बताओ वत्स उन्हें
क्या मैं कर दूं अनदेखी।

मेरा अन्तस् तुम्हें अभय
देने को रोक रहा है
कभी सुना है तुमने
माता का ऐसा व्यवहार
फिर भी अगर भूल समझूंगी
कभी सत्य तुम मानो
पट्टी खोल छोड निजव्रत
मै ले लूंगी प्रतिकार"।

"पिता मिले जन्मान्ध"
दुखी मन दुर्योधन तब बोला
·"माता ने पट्टी बाधी
हैं उधर पिताश्री कुंठित
देगा आशीर्वाद कौन
मा धर्म—नीति की पोषक
यह कैसा दुर्भाग्य रहा मै
उन आंखों से वंचित।
माता ! मत तुम अश्रु बहाओ
मत दो तुम आशीष
कर्ण, शल्य जैसे योद्धाओं
से है मुझ को सम्बल
मैं प्रणाम करता हूं कम से कम
स्वीकार करो यह
युद्ध—भूमि में तुम्हें याद
रखूंगा मां ! मैं प्रतिपल।"

दुर्योधन के जाते ही
गान्धारी दुख की मारी
आंखों में आंसू भर आए
बोली मन ही मन में
काल बहुत बलशाली होता
किसने उसे हराया
ईश्वर दे सद्बुद्धि तुझे
सुख शान्ति मिले जीवन में।

विभीषिका

बन्धु बान्धवो को अर्जुन ने
कुरुक्षेत्र में देखा
धनुष छोड बोला "इस रण में
कौन बचेगा शेष"
हर विनाश में एक
सत्य का उद्‌घाटन होता
दिया कृष्ण ने मित्र पार्थ को
गीता का उपदेश।

अविनाशीं आत्मा की सत्ता को
रथ पर समझाया
फिर शरीर को वस्त्र सदृश
परिवर्तनशील बताया
इसी बहाने सांख्य, कर्म
फिर भक्ति योग समझाया
दिखला कर विराट रूप
अर्जुन का मोह मिटाया।

कुरूक्षेत्र में युद्ध हुआ
विकराल महाभारत का
भूमि रक्त से लाल हो गई
अगणित शव लथ–पथ थे
अस्त्र शस्त्र का नाद भयंकर
रण में हुआ निनादित
प्रथम दिवस ही बडे बड़े
विकराल योद्धा हत थे।

सेनापति जब भीष्म हुए
था नही हराना सम्भव
किया शिखंडी को सम्मुख
यह नई युक्ति बैठायी
कहा कृष्ण ने अर्जुन से
तुम बाण चलाओ शीघ्र
पलट गए तब भीष्म
उन्होंने शरशैया अपनायी।

द्रोणाचार्य बने सेनापति
भीषण युद्ध हुआ तब
सभी पुत्र गान्धारी के भी
उसमें हुए हताहत
पार्थपुत्र अभिमन्यु को तभी
चक्रव्यूह में फांसा
मारा गया उसे तब छल से
अर्जुन थे मर्माहत।

इधर कृष्ण ने रणक्षेत्र में
ऐसी युक्ति चलायी
अश्वत्थामा पुत्र नाम के
हाथी को मरवाया
'अश्वत्थामा हतो' न पूरा वाक्य
द्रोण सुन पाए
धृष्टद्युम्न से दुखी द्रोण का
औचक बध करवाया।

कौरव सेना नष्ट हो गयी थी
इस भीषण रण मे
भीम और दुर्योधन का
अब मल्ल युद्ध था जारी
किया भीम ने वार जानु पर
अन्त हुआ उसका भी
अश्वत्थामा कृपाचार्य अब
बचे विप्रकुल धारी
अश्वत्थामा को दुर्योधन ने
मरने से पहले
पास बुलाकर रक्त तिलककर
सेनाध्यक्ष बनाया
अर्धरात्रि में धृष्टधुम्न का
उसने बध कर डाला
तथा पाण्डवो के भ्रम में
पुत्रों का रक्त बहाया।

अर्जुन अश्वत्थामा का
अब युद्ध हुआ घनघोर
बच कर भागा अश्वत्थामा
अब न बचा था कोई
निज इच्छा से भीष्म पितामह ने
त्यागे निज प्राण
महायुद्ध से कौरव दल की
मान प्रतिष्ठा खोई।

विस्फोट

माताओ का आर्तनाद
बिधवाओं का चीत्कार
सुनकर कौरव कुल की आखें
रो कर सूज गई थीं
दास–दासियां पाण्डव दल को
जम कर कोस रही थीं
सभी स्त्रिया अट्ठारह दिन में ही
सूख गई थीं।

ऐसा महाकाल का नर्तन
नहीं किसी ने देखा
गान्धारी के सौ पुत्रों मे
बचा न कोई शेष
आखों की पट्टी के नीचे
जलते दो अंगारे
लगता था अब कोई घटना
होगी वहां विशेष।

पति के पास गयी गान्धारी
वह भी अब हत–प्रभ थे
कहा "तुम्हारे कारण मैंने
सौ पुत्रो को खोया
कितनी बार कहा था मैंने
पुत्र मोह को त्यागो
विष का वृक्ष राज्य लिप्सा के
कारण तुमने बोया।

अब तो फल जो मिलना था
वह हम लोगों ने पाया
मेरे कहने पर भी तुमने
नहीं काल को जाना
बुद्धिभ्रमित वह कर देता है
नहीं तुम्हारा दोष
बडे–बडे विद्वानों ने भी
उसे नही पंहचाना।

इतने मे आ गए विदुर
नत–मस्तक होकर बोले
"आए हैं श्रीकृष्ण आपसे
मिलने को आतुर हैं"
गान्धारी ने कहा
"विदुर ! तुम उन्हें शीघ्र बुलवाओ
हम भी देखें शेष बचे
अब उनके कितने गुर हैं"।

कहा कृष्ण ने "दुर्योधन की मृत्यु
बहुत दुखदायी
कैसा भी हो वीर
काल अब तक न किसी से हारा
पूछा गान्धारी ने "लेकिन
किससे युद्ध हुआ था
बोले कृष्ण "भीम ने उसको
गदा युद्ध में मारा"।

क्रोधातुर हो गान्धारी ने पूछा
"सच बतलाना
गदा प्रहार कमर के नीचे
करना क्या न्यायोचित
बोले कृष्ण "देवि ! मुझको भी
तुम इतना बतलाना
द्रुपद सुता के साथ हुआ जो
कितना था समयोचित"।

मन मसोस कर गान्धारी ने कहा
भूल अब जाओ
जो कुछ हुआ नहीं अब वापस
उसे लौट आना है
चर्म चक्षुओं से मैंने
निज पुत्र नहीं देखे हैं
उनके मृत शरीर तुमको
अब मुझको दिखलाना है।
व्यास कृपा की दिव्य दृष्टि से
जी भर कर देखूंगी
लीलाधर श्रीकृष्ण मुस्कराकर
धीरे से बोले
"आज्ञा मानूंगा देवी !
इसमे न तनिक भी सशय
अन्त महाभारत का अब.
मुझ पर भी तो कुछ हो ले"।

कृष्ण ले गए गान्धारी को
युद्धक्षेत्र के अन्दर
गान्धारी ने दिव्य दृष्टि से
जब विभीषिका देखी
मन मे क्रोधोन्माद भर गया
तन मे हुआ विकम्पन
आखों से ज्वाला फूटी
जो अब तक की अनदेखी
"कृष्ण ! सुना है तुमने
गीता का उपदेश दिया है
कहते हो यह जीना मरना
केवल एक छलावा
आत्मा अजर अमर होती है
यह शरीर है वस्त्र
मातृ–स्नेह नाते रिश्ते है
केवल एक भुलावा ?"

"विहित कर्म करने की शिक्षा
दी मैंने अर्जुन को
उन्हें पूर्ण करने में यदि
रिश्ते बाधक होते है
बिना हुए सम्पृक्त उन्हें
जो पूरा कर दिखलाते
वह ही तो निष्कामी जन
सच्चे साधक होते हैं"।

"वाक् चतुरता नहीं कृष्ण
सुनना है मुझे तुम्हारी
हुआ तुम्हारे ही कारण
यह इतना बडा विनाश
मारे गए पुत्र सौ मेरे
जामाता और भ्राता
दुर्योधन से वीर
हुंआ अगणित वीरों का नाश।

भीष्म त्याग दें अस्त्र
शिखंडी को तुमने बुलवाया
भ्रमित कर दिया द्रोण
जयद्रथ को तुमने मरवाया
कर्ण बेचारा रथ का पहिया
भी निकाल न पाया
दुर्योधन की जांघ बीच
तुमने प्रहार करवाया।

भूल नहीं सकती मैं
शल्य शकुनि का मारा जाना
भीष्म पितामह की शरशैया
उनका महा प्रयाण
फिर भी मैने क्षमा कर दिया
उसी भीम को जिसने
मेरे अपने सौ पुत्रों के
ले डाले हैं प्राण।

अन्तर्मन में देख रही हूं
मुझे न अब भरमाओ
महा समर के तुम नायक हो
शाप तुम्हें देती हूं
नाश जिस तरह हुआ
तुम्हारे कारण मेरे कुल का
वैसे ही यदुवंश मिटे
अभिशाप तुम्हें देती हूं"

"धन्य ! धन्य ! माँ गान्धारी
स्वीकार इसे करता हूं
यह तो मेरे लिए देवि !
तुमने सत्कर्म किया है
माता के पय से बढ़ कर
यह आशीर्वाद तुम्हारा
इसीलिए मैंने इसको
मन से स्वीकार किया है।"
सूखे पत्ते के समान
गान्धारी कांप रही थी
फूट रही थी किरणें उसके
अंगारे से तन से
शीतल जल से वाक्य कृष्ण के
ज्योंही पड़े अचानक
तन्द्रा से ज्यों जाग पड़ी
वह बोली निश्छल मन से।

"अरे कृष्ण् ! क्या मैंने तुमसे
कुछ अपशब्द कहे थे
ऐसा लगता है मैने कुछ
शाप तुम्हें दे डाला
क्षमा करो यदि ऐसा है
मैं सचमुच बहुत दुखी हूं
हन्त ! हन्त ! अनजाने में
मैने यह क्या कर डाला।

हंस कर बोले कृष्ण
"तुम्हारा कुछ भी दोष नहीं है
तुमने केवल वही कहा
जो कुछ अब होने वाला
बहुत हो चुका कार्य
जिसलिए मैं जग में आया था
शेष बचा था उसको भी
तुमने पूरा कर डाला।

अब यदु वंश विनाश–गर्त पर
खड़ा हुआ है देवी
आपस में लडना भिडना ही
उनका नाश करेगा
शाप आपका देना उनको
केवल एक बहाना
जिसका जैसा कर्म
अन्ततः वह ही उसे भरेगा।

मेरी यह प्रार्थना "पाण्डवों को
अब पुत्र समझ कर
अपना स्नेह–दान देकर
अब स्वयं शान्ति से रहिए"
चले गए श्री कृष्ण
गान्धारी को यह समझाकर
"पितृ तुल्य धृतराष्ट्र रहें
अब उनसे भी यह कहिए"।

अवसान

माता पिता समान युधिष्ठिर ने
दोनों को माना
मन से की सेवा सुश्रूषा
बीते पन्द्रह वर्ष
तब बोले धृतराष्ट्र
"हमारा अन्तिम समय निकट है
मेरी इच्छा वन जाने की
तुम सब रहो सहर्ष"।

बात न मानी साथ चले
कुन्ती संजय गान्धारी
कुछ दिन हरद्वार में रहकर
बन को किया प्रस्थान
किन्तु अचानक लगी एक दिन
जंगल में दावाग्नि
गान्धारी को उस क्षण का
पहले से था अनुमान।

संजय से धृतराष्ट्र ने कहा
"अब तुम हमको त्यागो
अपने-अपने कर्मो का फल
हम सब ने पाया है
यद्यपि मैं अन्धा था
फिर भी तुम थे मेरी आंखें
गान्धारी का त्याग समझ में
मुझे आज आया है"।

"पश्चाताप करो मत स्वामी !
अन्तिम क्षण आया है
करो कृष्ण का ध्यान
वही अब नौका पार करेंगे
मेरा शाप उन्होंने कितनी
गुरुता से स्वीकारा
मेरा है विश्वास वही
सब का कल्याण करेंगे।

जीवन भर अपनी आंखों पर
मैंने पट्टी बांधी
पतिव्रता का धर्म सत्य है
मैनें पूर्ण निभाया
किन्तु न कोई मेरी पीडा
समझ सका है अब तक
नारी की अव्यक्त वेदना
पुरुष समझ कब पाया।

फिर भी मैंने कभी नहीं
निज को हताश माना है
अन्तस् के नयनों पर
मैंने कभी न पट्टी बांधी
सौ पुत्रों को खोकर भी
मैंने निज धर्म निभाया
अपनी आत्मा के सम्मुख
मैं नही बनी अपराधी।

आर्यपुत्र ! अब विदा हो रहे हैं
हम नश्वर जग से
यदि कोई अपराध हुआ हो
मुझे क्षमा तुम करना"
यह कह कर गान्धारी ने
निज पति को किया प्रणाम
कुन्ती से बोली "सचमुच
आदर्श देवि तुम बहंना !

हम लोगों ने अपने–अपने
कार्य पूर्ण कर डाले
महायुद्ध के बाद नया युग
नव निर्माण करेगा
यह इतिहास महाभारत का
सदा प्रेरणा देगा
जब तक सृष्टि रहेगी
तब तक भारतवर्ष रहेगा।

तीनों ने दावानल में
अब अपनी आहुति देदी
भस्म हुआ तन किन्तु
योगियों सा मन में विश्वास
याद रहेगी युग युग तक
गान्धारी जैसी नारी
आंखों पर पट्टी बांधी
पर रचा नया इतिहास।

